भअवसाद की गहरी खाई में डूबता आधुनिक समाज

डॉ श्वेता बालाए

सहायक प्राध्यापकए अंग्रेजी विभागए
मालतीधारी महाविद्यालयए नौबतपुरए पटना।

सारांशरू.

प्रस्तुत लेख समकालीन भारतीय समाज में बढ़ती आत्महत्या, अवसाद एवं मानसिक तनाव की समस्या का बहुआयामी विश्लेषण प्रस्तुत करता है। यह अध्ययन इस धारणा को चुनौती देता है कि अवसाद केवल व्यक्तिगत अथवा मनोवैज्ञानिक समस्या है, और इसके स्थान पर यह तर्क स्थापित करता है कि इसकी जड़ें आधुनिक पूँजीवादी व्यवस्था, तीव्र प्रतिस्पर्धा, शैक्षिक दबाव, बेरोज़गारी, गिग अर्थव्यवस्था, कृषि संकट, सामाजिक विखंडन तथा पारिवारिक संबंधों के क्षरण जैसी संरचनात्मक समस्याओं में निहित हैं। लेख में नोएडा, कोटा, छम्म्ज परीक्षा से संबंधित घटनाओं, छात्रों तथा किसानों की आत्महत्याओं और राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (छब्त्ठद्ध के आँकड़ों के माध्यम से यह दर्शाने का प्रयास किया गया है कि आधुनिक विकास मॉडल ने आर्थिक असमानता, सामाजिक अलगाव और मानसिक असुरक्षा को बढ़ावा दिया है। साथ ही, यह लेख कृषि-आधारित पारंपरिक समाज और वर्तमान उपभोक्तावादी संस्कृति के तुलनात्मक अध्ययन द्वारा यह प्रतिपादित करता है कि समुदाय, प्रकृति और परिवार से बढ़ती दूरी मानसिक स्वास्थ्य संकट को और गहरा कर रही है। अंततः यह अध्ययन इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि आत्महत्या और अवसाद की समस्या का समाधान केवल चिकित्सीय या मनोवैज्ञानिक हस्तक्षेपों से संभव नहीं है, बल्कि इसके लिए सामाजिक, आर्थिक और नीतिगत स्तर पर व्यापक संरचनात्मक परिवर्तन आवश्यक हैं।

कुंजी शब्द: अवसाद, आत्महत्या, मानसिक स्वास्थ्य, पूँजीवाद, प्रतिस्पर्धा, बेरोज़गारी, गिग अर्थव्यवस्था, कृषि संकट, सामाजिक विखंडन, युवा पीढ़ी।

5 अक्तूबर 2023 का दिनए उत्तर प्रदेश के टेक्नोलॉजी हब कहे जाने वाले शहरए नोएडा में एक के बाद एक कुल 6 लोगों ने आत्महत्या कर ली। इसमें 17 वर्ष की आयु से लेकर 50 वर्ष की आयु तक के व्यक्ति शामिल थे जिसमें किसी ने पंखे से लटककर तो किसी ने ज़हर खाकर अपनी जीवन लीला समाप्त कर ली। जांच उपरांत पता चला कि सभी घटनाओं के पीछे एक ही वजह थी मानसिक तनाव। 17 साल की ललिताए 21 साल का सोनूए 22 साल की शिवानीए 50 साल के जगबीर सिंह राठी ये सारे लोग तनाव से इस कदर जूझ रहे थे कि इनमें जीवन जीने की ललक भी नहीं बची।

ऐसा ही एक और शहर है राजस्थान का कोटाए जिसे भारत का कोचिंग हब भी कहा जाता है। विगत कुछ वर्षों में यह ‘‘सुसाइड फैक्ट्री’’ में तबदील हो चुका है। यहां अधिकांशतः उत्तर भारत के राज्यों जैसे बिहारए न्च् आदि से लाखों की संख्या में छात्र.छात्राएं छम्म्ज्ए श्रम्म् जैसी प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी करने के लिए आते हैं। एक दुर्गमए गला काट परीक्षाए क्योंकि जहां इन परीक्षाओं में रिक्तियां हजारों में होती है तो वहीं परीक्षार्थियों की संख्या लाखों में। यहां से भी आए दिन बच्चों की तनाव या अवसाद के कारण आत्महत्या कर लेने की हृदय विदारक खबरें आती रहती हैं।[1]
2026 में छम्म्ज पेपर लीक और पुनरू परीक्षा लेने के मामले में अब तक 14 बच्चों ने आत्महत्या कर ली है। इनके अवसाद का कारण भी इस युग की ‘‘कर लो दुनिया मुट्ठी में’’ए भडर के आगे जीत है’’ए भसभी को ऊंचे सपने देखने चाहिए’’ए भदवजीपदह पे पउचवेपइसम वाली मानसिकता या अति सकारात्मक सोच है जो अंत में ‘‘दव.सवदहमत.इमपदह.इसम.जव.इम.इसम वाले`लदकतवउम में ले जाती है जिसके बाद एक ही उपाय बचता है ‘‘आत्महत्या’’।[2]

हाल ही में प्रकाशित (5ध्12ध्2023) छब्त्ठ ;छंजपवदंस ब्तपउम त्मबवतके ठनतमंनद्ध के आंकड़ों के अनुसार भारत में वर्ष 2022-23 में कोई 13ए000 से अधिक छात्रों ने आत्महत्या कर लीए जिसमें 10ए000 से अधिक बच्चे 18 वर्ष की आयु से भी कम के थे। इसमें भी 2000 से अधिक बच्चों ने परीक्षा के भय या दबाव के कारण आत्महत्या की थी।

छब्त्ठ ।क्ैप् 2022 की रिपोर्ट हमें यह बताती है कि वर्ष 2022 में तकरीबन 1ण्7 लाख लोगों ने आत्महत्या की जिसमें की एक तिहाई लोग या तो दैनिक वेतन भोगी थे या फिर किसान द्द मज़दूर थे। 9ण्6% वैसे थे जो स्व.रोजगार में लगे हुए थे। 9ण्2ः लोग बेरोजगार थे जिन्होंने अपनी जान स्वयं ही ले ली। इसी रिपोर्ट में ये भी बताया गया है कि लगभग 48ए000 महिलाओं ने आत्महत्या कर ली जिसमें से 52% गृहिणी थी तथा शेष 48% या तो दैनिक वेतन भोगी या फिर छात्राएं थी। खास बात ये कि अधिकतर आत्महत्याएं बड़े औद्योगिक शहरों जैसे महाराष्ट्राए तमिलनाडुए मध्यप्रदेशए कर्नाटकाए केरला एवम तेलंगाना जैसे शहरों में दर्ज की गई।

2024.25 छब्त्ठ के मार्फत देश में कुल 1ए70ए746 आत्महत्याएँ हुई।[3] इसमें 14ए 488 छात्र थे और लगभग 80 छम्म्ज् उम्मीदवार थे। पटना में तो छात्राएँ और महफ़ूज़ नहीं है यहाँ तो उनका रैप और मर्डर तक को आत्महत्या बताने की कोशिश होती है।

ज़ाहिर सी बात है कि साल दर साल बढ़ती आत्महत्या की घटनाओं ने हमें झकझोर कर रख दिया है। हर दिन हमए युवा पीढ़ी में तेज़ी से पांव पसारती इस खतरनाक बीमारी जिसे तनाव और अवसाद कहते हैंए के मूक दर्शक बनते जा रहें हैं। स्थिति निःसंदेह भयावह है। खास तौर पर तब जब अवसाद जो वयस्कों की बीमारी होनी चाहिए थी अब छोटे- छोटे बच्चों में भी दिखने लगी है।

सवाल यह उठता है कि आधुनिक समाज मेंए जहां विकास के बड़े- बड़े वायदे किए जाते हैंए जहां नेता इसी बात पर चुनाव जीत कर आते हैं कि वो हज़ारों लाखों नौकरियां युवाओं को देंगे तो फिर क्यों ये युवा पंख लगने से पहले ही पंखे से लटकने को मजबूर हैं। क्यों कोई 50 साल का प्रौढ़ व्यक्ति अपनी जान दे देता है? क्या जैसे कारण अखबारों में गिनाए जाते हैंए मसलन "पारिवारिक तनाव"ए भझगड़े" या "अकेलापन" इत्यादि वही मूल कारण है इस समस्या का या फिर कुछ इससे भी गहरा और चिंताजनक। इस पर हमें संजीदगी से विचार करना होगा।

यह प्रश्न अकसर मन को कचोट जाता है कि जहां फ्रायड के विचारों ने बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में मनोविज्ञान के क्षेत्र में एक बड़ी क्रांति लाई वहीं समाज में मानसिक बीमारियां दिन दोगुनी और रात चौगुनी बढ़ती ही गई।[4] मानसिक अस्पतालोंए क्लिनिकोंए अनुसंधानों और दवाइयों में अप्रतिम बढ़ोतरी होती गई परंतु मनोविज्ञान हारता ही गया। क्यों? क्योंकि समस्या की जड़ आंतरिक कम बाह्य ज्यादा है। और जब तक हम उसे ठीक नहीं करेंगे तब तक मनोवैज्ञानिक उपदेशों से कोई विशेष लाभ नहीं होगा।

मानव एक सामाजिक प्राणी है। प्रकृति की गोद में वह पलता है। समाज और प्रकृति का संसर्ग ही मानव को संवेदनशील बनाता है। हम अपने कुछ गुणों के साथ पैदा होते हैं और कुछ गुण हमें समाज से मिलते हैं। जीवन में अध्यात्म प्रकृति के प्रति प्रेम से उभरता है। जब मानव कृषि आधारित आर्थिक सामाजिक तंत्र में रहता था तो उसे समुचित रूप से सामाजिक द्द पारिवारिक प्रेम व संबल मिलता था और आध्यात्मिक सुख और शांति प्रकृति की गोद में जाने से मिल जाती थी। इसी कारण हमने उन दिनों के किसी भी साहित्यिक पुस्तकों में अवसाद या आत्महत्या जैसे शब्द कम ही सुने। परिवारए समाजए प्रकृति व स्थिर आर्थिक तंत्र ने मानव को शारीरिक एवम् मानसिक रूप से सुदृढ़ बनाया। एक वयस्क कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी हार नहीं मानता था। समाज के विभिन्न वर्ग मूलतः खेतिहर थे। सभी के जीवन शैली में एक प्रकार की समानता थी। उच्च वर्ग और निम्न वर्गों में आर्थिक असमानता इतनी विशाल न थी जितनी की आज आम आदमी और पूंजीपतियों के बीच हैस आज का समाज हजारों साल पुराने कृषक समाज का ठीक उलट है और आज का साहित्य भी मानसिक तनावए अकेलापन से जूझते लोगों की कहानी से पटा पड़ा है।

आज हम एक भागती दौड़ती दुनिया में जी रहें हैं जहां रुकना मना है। जहां कोई ठहराव नहीं है। जो ठहर गया समझो मर गया। किसी को किसी के लिए समय नहीं है। पति को पत्नी के लिएए पत्नी को पति के लिएए माता द्द पिता को बच्चों के लिएए बच्चों को माता–पिता के लिएए पड़ोसी को पड़ोसी के लिएए दोस्त को दोस्त के लिए कहीं कोई समय नहीं है। सभी बस भागे जा रहें हैं। एक बेहद ही मशहूर फिल्मए भ३ प्कपवजे ए के डायलॉग की तरहए भस्पमि पे ॅ तंबम३ण्ण्िलवन कवदश्ज तनद ॅिज३ण्ण्लवन ूपसस इम सपाम ॅ इतवामद ॅदकंण्ण

ध्यान देने वाली बात यह है कि इस भाग दौड़ वाली संस्कृति का विकास भी पश्चिम के महान वैज्ञानिक डार्विन की ‘'नतअपअंस व जीम पिजजमेज थ्योरी से उपजीत है।[5] इस थ्योरी ने न सिर्फ विज्ञान के क्षेत्रए बल्कि सामाजिकए साहित्यिक एवं आर्थिक तंत्र को नई रूप में गढ़ने का मौका प्रदान किया। इसने पश्चिम को अपनी पूंजीवादी सिद्धांतो को जन मानस में गहरे से पैठ बनाने में मदद की। पूर्वी दर्शन और संस्कृति को कुचलने और अपनी श्रेष्ठता साबित करने में मदद की। इस सिद्धांत ने पश्चिम को वो अस्त्र प्रदान किया जिसने प्रतिस्पर्धा के रूप में सामाजिक ताने बाने में एक अजीब सा ज़हर घोल दिया है जिससे अब पश्चिम और पूरब सभी देशों के लोग पीड़ित होने लगें हैं।

पहले हमें बड़े सिखाते थेए प्रेम में ही सुख है''य भ संतोषम परम सुखम''ए भदान करो पुण्य पाओ'' आदि आदि। गीत गाए जाते थेए भराही मनवा दुःख की चिंता क्यों सताती है दुख तो अपना साथी है''। परंतु अब तत्काल संतुष्टि और अति उपभोक्तावाद ने हमें अत्यधिक खर्चीला और दिखावटी बना दिया है। क्वेजवमओल ऐसे समाज को आड़े हाथों लेते हुए कहते हैं किए

भजीम ूवतसक ेलेरू लवन ींअम दममके ेजपेलि जीमउण ल्वन ींअम े उनबी तपहीज े जीम तपबी ंदक जीम उपहीजलण क्वदश्ज ीमेपजंजम जव ेजपेलि दममकेय पदकममक मगचंदक लवनत दममक ंदक कमउंदक उवतमण जीपे पे जीम ूवतसकसल कवबजतपदम व िजवकंलण ।दक जीमल इमसपमअम जींज जीपे पे तिममकवउ ण

बच्चा पैदा होने के पीछे की कहानी भी रेस से ही शुरू होती हैए स्पर्म की रेस। बाकी की कसर अभिभावक पूरी कर देते हैं। वो उसकी किलकारियों में भी कल का डॉक्टरए इंजीनियरए वैज्ञानिक या क्रिकेटर बनने की भविष्यवाणी सुन लेते हैं। बच्चा थोड़ा बड़ा हुआ नहीं कि उसे चित्रकारीए नृत्यए तैराकी और भी न जाने क्या.क्या की ट्रेनिंग दिलाना शुरू कर देते हैं। पढ़ाई का बोझ अलग से। बच्चा तो अनुसरण से सीखता है। मां - बाप के इस अति महत्वाकांक्षी स्वभाव को वो बड़ी जल्दी ही सीख लेता है और अपने सहपाठियों से प्रेम व दोस्ती के बजाय प्रतिस्पर्धा करने लगता है। उसकी प्रतिस्पर्धा की आग को और हवा देते निजी स्कूल और कोचिंग संस्थान को 99% नतीजों का माया जाल फेंक कर अपना बिज़नेस बढ़ाते रहते है। बच्चा जब घर से बाहर निकलता है तो उसे सिर्फ मकानों का जंजाल नज़र आता है। जंगल और पेड़ पौधों की तो बात ही मत कीजिएए एक छोटा सा खुला मैदान भी नहीं होता जहां वो खेल सके।

अंधी पूंजीवाद ने एक ऐसे समाज की संरचना कर दी है जहां न चाहते हुए भी परिवार टूटते हैंए युवाओं को अपना घरए अपनी ज़मीन और अपना समाज छोड़ कर दिल्लीए मुंबईए हैदराबाद जैसे नगरों में पलायन के लिए विवश होना पड़ता है। खेतिहर किसान के बच्चे अधिकतर मज़दूर बनते हैं क्योंकि हमारी सरकार उन्हें सरकारी स्कूल में बिना पढ़े लिखे डिग्री पाओ वाली मुफ्त एवं स्तर हीन शिक्षा देती है जिससेए वे किसी काबिल नहीं बचते हैं। चंद मुट्ठी भर लोगों को छोड़ दिया जाए तो ये पीढ़ी एक विचारशून्यए दिशा विहीनए और कमजोर मानसिकता वाली पीढ़ी है जो अपने पतन की ओर ठेली जा रही है।[6]

शहरों में भी कमोबेश यही हालात है। चरमराती आर्थिक स्थिति टूटते रिश्तों का पहला कारण बनती हैं। एक तरफ तो चकाचौंध से भरे बाज़ार और वहीं दूसरी तरफ रोजगार की घोर कमीए युवाओं को कुछ इस तरह तोड़ती है कि वे समय से पहले ही कुम्हला जाते हैं। युवाओं का बचपनए उनकी जवानी छीन ली गई है। बचपन से ही मां.बापए और अध्यापक मिलकर अनवरत दबाव बनाते जाते हैं। उन्हें उनके भविष्य के बारे में सुनहरे सपने स्वछंद आकाश में नहीं अपितु डर के माहौल में दिखाए जाते हैं जिसमें बच्चे के मासूम दिमाग को चहूँ ओर से आती चेतावनियांए नंबर का बोझए छिन्न.भिन्न कर देती है और नतीजा एक अपरिपक्वए निहायत ही कमजोरए डरे हुए व्यक्तित्व के पुतले बन कर वे निकलते हैं जो जीवन की छोटी मोटी समस्याओं का सामना करने लायक भी नहीं बचते हैं और तुरंत ही आत्मघाती हो जाते हैं।[7] फिर कहीं से ेनपबपकम दवजम बरामद होता है कि डनउउल दृ च्चं ए बंदश्ज कव श्रम्म्ए व ए ेनपबपकमए ए उ सववेमतए ए उ ूवतेज कंनहीजमतए ेवततल उनउउल दृ चंचंए पज पे वदसल जीम ैंसज वचजपवदश

होना तो कुछ यूं चाहिए था कि जिस ज़ोर शोर के साथ शिक्षा का प्रचार प्रसार किया गया था और हमारे पूर्व से आ रहीं सामाजिक संरचना व पारंपरिक रोजगार के ढांचे को रुढ़िवादी बताते हुए तोड़ा गया था तो सरकार बढ़ते हुए शिक्षित युवाओं के लिए उनकी संख्या के अनुपात में ही रोजगार का सृजन उतनी ही तेज़ी से करती ए ताकि पढ़े लिखे युवाओं को हाथों हाथ नौकरी मिलती। "डिग्री लाओ नौकरी पाओए अगर जो नौकरी नहीं मिले तो बेरोजगारी भत्ता पाओ"। ऐसी सरकार सत्ता में आनी थी। पर अफ़सोस कि ऐसा हो न सका। स्थिति तो ऐसी है कि नौकरी की तैयारी डिग्री लेने के बाद अलग से करनी पड़ती है। काले केश पक कर खिचड़ी हो जाते है फिर भी नौकरी नहीं मिलती। फिर उनमें से कुछ छत से कूद कर अपनी जान दे दे तो इसमें आश्चर्य नहीं होना चाहिए। सवाल उठता है कि वो डिग्री आखिर किस काम कि जो जल्द से जल्द नौकरी न दिला पाए और वो शिक्षा किस काम की जो जीना न सीखा सके। नतीजा गला काट प्रतिस्पर्धा अब अपने चरम पर हैं जहां युवा दूसरे का नहीं अपना ही गला घोटने को विवश हैं क्योंकि साल दर साल मिलती ना कामयाबियाँ उन्हें उजालों से अंधेरों की तरफ धकेलती जा रही है जहां से उन्हें बाहर निकलने का कोई रास्ता नहीं मिलता। उसका आत्मविश्वास रसातल में चला जाता है जहां उसका कोई अपनाए कोई हमदर्द नहीं जो उसे संबल दे सके। और फिर कोई क्यों दूसरे की फिक्र करे वो भी उस समाज में जहां रुकना मना हैए थकना मना हैए हारना कलंक हैए नंबर कम लाना पाप और नौकरी न मिलना या छूट जाना मानो जीवन का सूरज ही अस्त हो जाना। जब मां बाप ही बच्चों को अपने से दूर कर देते हैंए चाहे मजबूरी वश या किसी सोच वशए तो वैसी स्थिति में बच्चा जाए भी तो जाए कहां। जब वह टूट चुका होता है तो वो किसकी गोद में अपना सिर छिपाएए किसके कांधे पर माथा रखकर रोएए किसको गले लगा कर अपना मन हल्का कर सके?[7]

ऐसा भी नहीं है कि सभी लोग आत्महत्या का रास्ता ही चुन लेते है। कुछ नाकामयाब लोग अपने सपनों से समझौता करके या उसे कुचल कर किसी कंपनी में छोटी मोटी नौकरी पकड़ लेते है। या फिर कोई सरकारी संस्थान उन्हें आउटसोर्सिंग के माध्यम से अथवा दैनिक वेतन भोगी के रूप में रख लेता हैं। इस बढ़ती महंगाई में भी वे 10 से 15 हज़ार की नौकरी करने को विवश हैं। एक निश्चित योजना के तहत ऐसी अर्थ तंत्र को विकसित किया जा रहा है जहां लिखो फेंको कलम की तरह कर्मचारी को हायर और फायर किया जाता है। उसके जवानी का भरपूर दोहन करके जब वह बुढ़ापे में अपना कदम रखता है तो कंपनी का मालिक उसे चूसे हुए आम की गुठलियों की तरह कंपनी से निकाल बाहर फेंक देता है। यह जीवन का एक ऐसा वक्त होता है जब उसकी बेटी ब्याह के काबिल हो जाती है। जब उसका पुत्र किसी इंजीनियरिंग कॉलेज या कोई कोचिंग सेंटर में फीस की मोटी रकम भर करए पढ़ाई कर रहा होता है। ऐसे ही वक्त में उसे नौकरी से बिना किसी पेंशन दृ भत्ते के निकाल फेंका जाता है। नतीजा पारिवारिक जिम्मेवारियों का बोझ और कर्ज से तंग आकर ऐसे लोग खुदकुशी कर लेते हैं। सवाल उठता है कि जहां पचास तरह के जंग आम लोगों पर लादे जाते हैं वहां सरकार नौकरियां पैदा करने में इतनी असहाय क्यों प्रतीत होती है? क्यों सिर्फ कुछ को फायदा पहुंचाने के लिए इस गिग इकोनॉमी को बढ़ावा दिया जा रहा है? क्या लोकतंत्र की संरचना के नींव में ही पूंजीपतियों को पोषित करने के बीज मौजूद हैं क्योंकि चुनी हुई सरकारें आम लोगों को कम और पूंजीपतियों को लाभ पहुंचाने के लिए ज्यादा प्रेरित दिखाई देती है। अपने आस पास अगर नज़र दौड़ाएंगे तो आपको ये समझने में देर नहीं लगेगी कि किस तरह सारी सरकारी योजनाओं की परिणति पूंजीपतियों को लाभ पहुंचाने के लिए है न कि गरीबों का उद्धार करने के लिए। योजनाबद्ध तरीके से सरकारी संस्थाओं को जर्जर किया जा रहा है जो कि किसी जीवन-दायिनी सरिता की तरह गरीबए वंचितए शोषित का उतना ही उद्धार करती है जितना की समर्थ वान का। समान अवसर के साथ सभी के विकास में अहम भूमिका निभा कर उन्हें अपने पांव पर खड़ा होने का मौक़ा प्रदान करती है। खास करके समर्थ हीन बच्चों के जीवन में यह आशा का दीपक है परंतु अब वह आशा का दीपक बुझता जा रहा है। एक छोटा सा उदाहरण सरकारी स्कूलों का है जहां बच्चों को मिड डे मील तो दिया जाता है परंतु गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा नहीं क्योंकि सरकार उसे मज़दूर तो बनाना चाहती है परंतु ऑफिसर नहीं।

अफ़सर से याद आया कि संस्थानों की फिज़ाओं में एक नया सपना, एक नया संकल्प तैर रहा है कि हम बच्चों को पढ़ा कर एंटरप्रेन्योर बनाए ताकि वो “मउचसवलउमदज हमदमतंजम कर सकें। निश्चय ही यह एक कर्ण प्रिय शब्द है और इसकी भविष्य में संभावनाएं भी है परंतु “मसमबजतवदपब बवजजंहम ⁸ को मूर्त रूप देने के लिए हमें अभी बहुत काम करना बाकी है। कोरोना काल से प्रचलित इस शब्द , “ूवता तिवउ ीवउम ए के तर्ज पर लोग घर से बैठे बैठे इंटरनेट का लाभ उठाते हुए कई महत्वपूर्ण कार्य कर सकते हैं तो ये रोज़गार उत्पत्ति में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकता है। साथ ही परिवारों को जोड़ने और पलायन रोकने का एक कामयाब तरीका होगा। परंतु वस्तुस्थिति कुछ और ही है।

स्व . रोज़गारए अंग्रेज़ी में ‘मसि मिउचसवलउमदजश में मोटे तौर पर वे लोग आते हैं जो या तो कोई छोटा मोटा धंधा जैसे पकौड़े तलनाए टी स्टॉल या खेत में काम इत्यादि करते हैं या उसमें हाथ बटाते हैं बिना पैसे के या कुछ अन्य लोगों को रोजगार भी सहायक के रूप में देते हैए जैसे रेस्टोरेंट में बर्तन धोना इत्यादि। ये सभी मोटे तौर पर मज़दूर ही हैं जिनकी भ्म्ड के तहत कोई सोशलध्जॉबध्फ्यूचर सिक्योरिटी नहीं है। ये सभी लगातार गरीबी की दल . दल में धंसे जा रहे हैं और कर्ज़ए भारी पत्थर के समानए उनकी मौत को सुनिश्चित कर रहा है।

सरकारी नौकरियां जान बुझ कर घटाई जा रही है। रिक्त पदों को रिक्त ही रखा जा रहा है। उसे भरने के लिए पैसे नहीं हैं। पेंशन बंद हो गया क्योंकि पेंशन के लिए पैसे नहीं है। सरकारी अस्पतालों में सुविधाओंए दवाइयोंए नर्सो ए डॉक्टरों एवम अन्य कर्मचारियों की घोर कमी है क्योंकि पैसे नहीं है। तो फिर पैसा जाता कहां हैं? क्पतमबज पदकपतमबज टैक्स के माध्यम से जो कमाई होती है वो कहां जाती है?

सरकारी योजना मुफ्त खोरी पर टिकती है। नौकरी मत दोए मुफ्त अनाज दे दो। बहाली मत करो मकान मुफ्त बनवा दो। पेंशन मत दो पर जीवन बीमा करवा दो। वोट मिल जाएगा।

किसानए अन्न दाताए भूख से मरने को मजबूर है। एक आंकड़े के मुताबिक एक किसान की प्रति व्यक्ति आय 27 रुपए से भी कम है परंतु प्रति किसान क़र्ज़ का बोझ ₹74ए121। बढ़ते क़र्ज़ के बोझ तले प्रति घंटे एक किसान आत्महत्या कर लेता है। उनके द्वारा पैदा वार का उचित मूल्य तक उन्हें नहीं मिलता। प्राकृतिक दृ आर्थिक बाधाओं से अगर भाग्य भरोसे वो गिने चुने फसलों की खेती कर भी ले तो उससे सिर्फ पेट पालने तक की आमदनी होती है। बिचौलिए बिना किसी मेहनत के दोगुना मुनाफा कमा लेता है। आज़ादी के बाद भी किसान सबसे ज्यादा शोषित हैं। क्यों? हालात ऐसे हैं कि किसान अब मज़दूर में तब्दील हो चुकें है। किसान का बच्चा अब किसानी नहीं करना चाहता।

भारत प्राकृतिक संसाधनों से भरा पूरा देश है जहां की 50% आबादी कृषक है। हमारी अर्थव्यवस्था की रीढ़ है कृषि परंतु हमने पश्चिम व्यवस्था को कट कॉपी पेस्ट करते हुए इनपर बीना किसी विचार के चस्पा कर दिया है ताकि इनका दोहन किया जा सके। अंग्रेज़ो की गुलामी से बढ़ कर अब हम कॉरपोरेट्स की गुलामी पर

प्रोन्नत हुए हैं। हालात ऐसे हो गए हैं कि किसान की कमाई एक मज़दूर से भी कम है। कल्पना करें कैसे एक ज़मीन का मालिक ना इज़्ज़त से जी ही सकता है न भीख ही मांग सकता है। सिवाए आत्म हत्या के उसके पास क्या ही उपाय है? अगर हमारी अर्थव्यवस्था किसान को मध्य में रख कर बनाई जातीए अगर उन्हें धनी बनाने की कोशिश होती तो निःसंदेह ना बेरोज़गारी एक विकराल समस्या बनती न गरीब अमीर की खाई गहराती। अर्थव्यवस्था की पटरी पर विकास की रेल गाड़ी सरपट दौड़ती। स्वामीनाथन रिपोर्ट के मुताबिक किसानों को उनकी औसत लागत से कम से कम 50% अधिक समर्थन मूल्य सरकार को देना चाहिए जिसे उन्होंने ब्2़50ः फार्मूला के रूप में प्रेषित किया था पर अफ़सोस कि आज़ादी के 77 वें साल में भी हम किसान को उनका हक़ए उनका सम्मान नहीं दिला सके।

बढ़ते कॉर्परटिज़म ने गरीबों से उनके दुकान छीन लिए और बड़े बड़े मॉल खड़े कर दिए जिसमें वही दुकान वाले मज़दूर बन गए। उद्योग हमे रोज़गार नहीं दे पा रहे। पूंजीवाद सिर्फ मुनाफ़ा देखता है और इंसान को एक मज़दूर। भारत विश्व की सबसे युवा देश है परंतु यहां 83% युवा बेरोज़गार हैं। ऐसे में तनावए अवसादए मानसिक बीमारियां जन्म नहीं लेंगी तो क्या जन्म लेंगी। नौकरियों के लगातार सिकुड़ते श्रोत युवाओं को आत्मघाती कदम उठाने पर मजबूर कर देते हैं। स्थिति बहुत भयंकर है। और निदान कहीं दिखाई नहीं देता। निराशा से घिरा ये समाज अपने पतन को विवश है। ये एक कटु सत्य है कि इंसान की ऐसी दयनीय स्थिति इतिहास में कभी न थी जैसी की अब है।

सन्दर्भ सूचीरू

1ण ीजजचेरूध्ध्दंअईीतंजजपउमेण्पदकपंजपउमेण्बवउध्ंजंमध्नजजंत.चतंकमीध्दवपकंध्दवपकं.ीामद.इल.6.नपबपकमे.पद.24.ीवनते.
चमवचसम.तम.मउइतंबपदह.कमंजी.कनम.जव.कमचतमेपवदध्ंतजपबसमीवूध्104258096ण्बउे

2ण भ्ंदए ठण ब्ण ;2015द्धण जीम ठनतदवनज ैवबपमजलण ैजंदवितक न्दपअमतेपजल च्तमेण

3ण छंजपवदंस ब्तपउम त्मबवतके ठनतमंनण ;2023.2025द्धण ।बबपकमदजंस क्मंजी ंदक ैनपबपकमे पद प्दकपं 2024ण डपदपेजतल
वि भ्वउम ।ििपितेए ळवअमतदउमदज वि प्दकपंण

4ण थ्तमनकए ैण ;1961द्धण ब्पअपसप्रंजपवद ंदक प्जे क्पेबवदजमदजेण छमू ल्वतारू छवतजवदण

5ण क्तूपदए ब्ण ;1859द्धण व्द जीम व्तपहपद वि चमबपमे इल डमंदे वि छंजनतंस ैमसमबजपवदण स्वदकवदरू श्रवीद डनततंलण

6ण थ्तवउउए म्ण ;1955द्धण जीम ैंदम ैवबपमजलण छमू ल्वतारू त्पदमींतजण

7ण क्नतीमपउए म्िं ;1951द्धण ैनपबपकमरू ।ैजनकल पद ैवबपवसवहलण छमू ल्वतारू थ्तमम च्तमेण

8ण ज्वििसमतए ।सअपद म्नहमदमए जीम जीपतक ॅंअमए त्ंदए 1984ण

9ण ॅवतसक भ्मंसजी व्तहंदप्रंजपवदण ;2025द्धण क्मचतमेपअम क्पेवतकमत ;क्मचतमेपवदद्ध थ्ंबज ैीममजण ळमदमअंरू ॅभ्व्